जैनेन्द्र के उपन्यासों में प्रेमभाव की अभिव्यक्ति

श्रीमती संगीता दीक्षित

शोध छात्रा (हिन्दी विभाग)कलिंगा विश्वविद्यालय

डॉ.ममता रानी

सहा.प्राध्यापक (हिन्दी विभाग) कलिंगा विश्वविद्यालय

सभ्यता और संस्कृति का विकास करते हुए मनुष्य ने अन्य जीवन मूल्यों के साथ–साथ 'प्रेम' नामक मूल्य का निर्माण किया था। जिसकी बुनियाद में स्त्री – पुरूष निःशेष समर्पण, एक दुसरे के लिए आत्मोत्सर्ग की भावना तथा मन और देह से हमेशा के लिए एक होने की चाह तथा विविध संघर्षो को झेलकर अंत में समाज की मान्यता एवं स्वीकृति प्राप्त करने की भावना रहती है। संत कवियों ने 'प्रेम' को एक उदात्त भावना मानकर उसे ईश्वर प्राप्ति का साधन भी माना है तो किसी ने इसे आध्यात्मिक या अभौतिक तत्व के रूप में स्वीकार किया है। वास्तव में प्रेम मानव–मन की एक विशेष अनुभूति है जो उसके मन में व्याप्त वासना को मिटाकर उसकी आत्मा को पवित्र बना देती है, जिससे मनुष्य निरविकार बन ईश्वराभिमुख हो जाता है।

मानव मात्र में 'प्रेम' की अनुभूति अवश्य रहती है परंतु परिस्थितियों के अनुसार यह अनुभूति विविध स्वरूपों को धारण करती है। कभी वह रूमानियत धारण करता है तो कभी उसमें आध्यात्मिकता नजर आती है। कभी वात्सल्य का रून धारण करता है तो कभी दाम्पत्य प्रेम में प्रेम कि सरिता बहती है। कभी मातृभूमि के प्रति प्रेम उमड़ पड़ता है तो कभी सांसारिकता के जंगल में यह प्रेम पुण्य त्रिकोणात्मक स्वरूप भी धारण कर लेता है ं। प्रेम के बहुआयामी अस्तिव्त को कोई नकार नहीं सकता। जैनन्द्र ज ने भी प्रेम रूपी शक्ति को मानकर उसके महत्त को इस प्रकार व्यक्त किया है –'' प्रेमी – प्रेमिका शब्दों के उपयोग में खतरा है कि हम किसी व्यक्तिगत सन्दर्भ में सिमट आते है, पर जो महाशक्ति तमाम जगत और जीवन – व्यापार को चला रही है, उसके इंगित के लिए हमारे पास एक संवेद्य संज्ञा यही है –'' इसलिए 'प्रेम' किसी भी कथा – साहित्य का अति प्रचलित और प्रिय विषय रहा है।

हिन्दी के आरंभिक उपन्यास एक अर्थ में प्रेम कथाएँ ही हैं। इन उपन्यासों में वर्णित प्रेम अपने भाव – विश्व में रोमंटिक दिखाई देता है। प्रेमचंद के उपन्यासों में उपन्यासों के कथ्य के अनुरूप 'प्रेम' समाज की अनेक समस्याओं में से एक समस्या के रूप में प्रस्तुत है जो स्वीकारात्मक एवं नकारात्मक रूप से व्यक्त हुआ है। जैनेन्द्र कुमार ने अपने उपन्यासों के द्वारा 'प्रेम' को एक नया आयाम प्रदान किया और

वह है – आधुनिक मनोविज्ञान का । आधुनिक मनोविज्ञान प्रेम को आत्मिक और प्रेम जैसी संज्ञाओं को स्वीकार नहीं करता वरन् वह प्रेम को एक संवेदना के रूप में स्वीकार कर उस संवेदना की स्थिति एवं महत्व को भी परखने का कार्य करता है। इसीलिए डॉ. परमानंद श्रीवास्तव ने जैनेन्द्र के उपन्यासों का प्रेम परक मूल्यांकन करते हूए लिखा है –'' प्रेम जैनेन्द्र के उपन्यासों की केन्द्रीय संवेदना है। वह उनके लिए दैहिक अनुभव है और आत्मिक प्रतीति भी।'' जैनेन्द्र जी ने अपने उपन्यासों में प्रेम का चित्रण अनेक रूपों में किया है, जो संक्षेप में इस प्रकार है।

(1) रोमांटिक प्रेम :–

प्रकृति दत्त स्त्री का पुरूष के प्रति तथा पुरूष का स्त्री के प्रति आकर्षण रोमांटिक प्रेम को जन्म देता है। जैनेन्द्र भी बताते है –'' स्त्री और पुरूष तत्वों में एक अमोध आकर्षण है उसको संघर्ष कहो तो भी वही बात है। अब ये दो तत्व अपनी शुद्धता में तो कहीं विद्यमान ही नहीं। सब कोई दोनों के न्यूनाधिक में से बने हैं। इसलिए संसार चलता है ओर चित्र–विचित्र लीला छटा फैलाकर यहाँ मुखरित होती है।''

पुरूष या स्त्री का परस्पर आकर्षण प्रेम को उत्पन्न करता है तब प्रेमी (प्रेमपात्र) के जीवन में एक नया आलोक भर जाता है उसके ह्रदय में एक नया स्पेदन उन्पन्न हो जाता है।

'परख' उपन्यास में कट्टो के आकर्षण के कारण सत्यधन के ह्रदय में प्रेम तरंग लहरा दी। जिसका लेखक ने आकर्षक वर्णन किया है –'' एक लहर उठी और उनके सारे अस्तित्व को डुबाने उतराने लगीं सभी कुछ मिट'मिटाकर सावन के इन्द्र–धनुष के रंगो में लय हो गया, और उन रंग–बिरंगे रंगो में झाँककर देखती हुई दीखने लगी वह कट्टो। यह क्या माया थी !'' सत्यधन की भाँति कट्टो भी रोमांटिक प्रेम के कारण सज–धज कर सत्यधन के विचारों में खोकर स्वयं लज्जित हो जाती है। 'सुनिता' उपन्यास में भी रोमांटिक प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। स्त्री का सौन्दर्य, स्त्री का प्रेम पुरूष के ह्रदय को परिवर्तित भी कर सकता है इतना ही नहीं उसके लक्ष्यहीन जीवन को उपयोगी एवं सार्थक भी बना सकता है। हरिप्रसन्न जब सुनीता के घर आया था तब स्त्री जाति से भागने वाला एकाकी पुरूष था, परंतु सुनीता के सौन्दर्य आकर्षक ने उसके अहं को मानो तोड़ दिया था। इसलिए चाँदनी रात में खुले पत्थर पर सो रही सुनीता को देखकर सोचता है–'' ओह, रेशमी वस्त्र चाँदनी में कैसे खिल रहे हैं ! और यह मुखड़ा विनिद्रित, सम्पुटित कैसा प्यारा लग रहा है। कैसा प्यारा ओर कैसा जहर !'' और इसी रोमांटिक प्रेम के कारण जब सुनीता उसके सामने निवस्ना होती हे तब हरिप्रसन्न उसके प्रेम के सामने पराभूत होकर दोनों होथों से आँखे ढँक लेता है।

'त्यागपत्र' की मृणाली भी शीला के भाई के आकर्षण में बँधकर रोमांटिक प्रेम की अनुभूति करती हुई प्रेम गगन में चिड़िया बनकर उड़ना चाहती है और कहती है–'' मैं चिड़िया होना चाहती हूँ। हाँ चिड़िया ! उसके छोटे–छोटे पंख होते है। पंख खोल वह आसमान में जिधर चाहे उड़ जाती है। क्यों रे, कैसी मौज है ! नन्हीं–सी पूँछ। मै चिड़िया बनना चाहती हूँ।'' इतना ही नहीं रोमांटिक प्रेमानुभूति में डूबकर कभी वह प्रमोद को प्यार करती है, कभी मिठाई खिलाने की बात करती है, तो कभी अपने आप में खोंई सी छत पर उड़ते हुए बादलों को देखती है। शीला के भाई के प्रति अपने रोमांटिक, आकर्षण जन्य प्रेम के कारण अपने भतीजे प्रमोद को बाँहों में भरकर पूछती है –'' प्रमोद, तू मुझे प्यार करता है ? और फिर वह बताती है –'' प्रमोद, मै तुम्हें बहुत प्यार करती हूँ।''

'कल्याणी' उपन्यास में भी डॉ. आसरानी कल्याणी के प्रति आकर्षित दिखाई देते हैं, परंतु उनका आकर्षण, प्रेम कल्याणी के शरीर एवं पेशे के कारण ही। इसलिए उसे चाहते हुए भी धन प्राप्ति के लिए उसे पीटते भी है इतना ही नहीं कल्याणी और प्रीमियर के सम्बन्धों का फायदा भी उठाना चाहते हैं। जैनेन्द्र रोमांटिक प्रेम को दिखाया जरूर है, परंतु उसकी सफलता या प्रेम प्रतिदान के रूप में प्रेमी के लिए मर–मिटना दिखाया नहीं क्योंकि जैनेन्द्र मानते थे – '' प्रेमावस्था में दूसरी ओर सब परिपूर्ण और सुन्दर जान पड़ता है। प्राप्ति के अनन्तर सौन्दर्य की कमनीयत। उड़ जाती है और प्रेम पात्र में कई प्रकार का अनगढ़पन उभरा हुआ सामने दीखने लगता है।'' परंतु यह भी सच है कि नर–नारी परस्पर नैकट्य प्राप्त करते है तब प्रेम का व्याप्त उत्तरोत्तर बढ़ता ही रहता है। फिर भले ही सामाजिक दृष्टि से सफल दिखाई देता हो या असफल। लेकिन प्रेमी पात्र के ह्रदय में उसकी अनुभूति आजीवन बनी रहती है। इसीलिए दिनकर ने भी कहा है –'' नारी नर को छूकर तृप्त नही होती, न नर नारी आलिंगन में सन्तोष मानता है। कोई शक्ति है, जो नारी को नर से तथा नर को नारी से अलग रहने नहीं देती और जब वे मिल जाते हैं, तब भी उनके भीतर किसी ऐसी तृषा का संचार करती है, जिसकी तृप्ति शरीर के धरातल पर अनुपलब्ध है।'' अतः प्रेम का स्वरूप चाहे कोई भी हो मानव के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण रहता है। जैनेन्द्र ने शायद

इसीलिए अपने उपन्यास में रोमांटिक प्रेम को दिखा कर प्रेम की ज्योति जला दी है, जिनसे उनके पात्र प्रेम की ज्योति में और भी निखर आये दिखाई देते हैं।

(2) दाम्पत्य प्रेम :– स्त्री – पुरूष के बीच विवाहोपरान्त जो प्रेम सम्बन्ध स्थापित होता है, उसे दाम्पत्य प्रेम कहते हैं। इस प्रेम का आरंभ भी रोमांटिक अनुभूति के अन्तर्गत होता है, परंतु इसमें मात्र दैहिक तृप्ति का भाव नहीं होता, बल्कि पति–पत्नी एक दूसरे पर समर्पित होकर उच्च आदर्श जीवन

की स्थापना करते हैं। कमला सिंघवी भी इसी बात को लक्षित करते हुए बताती हैं –'' दाम्पत्य का स्त्रोत प्रकृति में है। उसका मर्म स्त्री और पुरूष की शाश्वत युगत भावना में है, उसकी नींव में स्त्री – पुरूष की पूरक पारस्परिक अपेक्षायें है, उसके उठान में आत्मीय दायित्व है, सज्जा और गरिमा अन्तवैंयक्तिक और सामाजिक मर्यादाओं में है।'' जैनेन्द्र भी पति–पत्नी के सम्बन्ध को एक विशिष्ट धरातल पर रखकर देखना चाहते है। उनके विचार हैं– '' पति–पत्नी सम्बन्ध वह है जिसमें एक – दुसरे की उत्कृष्टता ही परस्पर प्राप्त नहीं बनती, बल्कि निकृष्टता भी निवेदित होती है। उस सम्बन्ध का महत्व ही इसी में है। औपचारिक सम्बन्धों में हम निकृष्ट को अपने पास राक लेते हैं और उत्कृष्ट को ही दाम्पत्य प्रेम तभी बन सकता है जब पति – पत्नी परस्पर एक दूसरे की निजी विशेषताओं और मर्यादाओं को स्वीकार कर ले अन्यथा उनका दाम्पत्य दुःखद बन सकता है। जैनेन्द्र भी सुखी दाम्पत्य एवं दाम्पत्य प्रेम का रहस्य बताते हुऐ कहते है –'' प्रेम उससे उत्तरोत्तर उघन और व्यापार हो। वृत्ति उसमें यदि भोगान्मुख रखी जायेगी, तो निश्चय ही सफलता में सबसे बड़ी बाधा बन जाने वाली है।'' इसीलिए जैनेन्द्र ने दम्पति का मनोविश्लेषणात्मक चित्र प्रस्तुत दाम्पत्य प्रेम के दो स्वरूप दिखाये है।– (1) सफल दाम्पत्य प्रेम (2) असफल दाम्पत्य प्रेम।

' विवर्त' के नरेशचन्द्र और मोहिनी के दाम्पत्य के द्वारा सफल दाम्पत्य प्रेम को प्रस्तुत किया गया है। विवाह के चार वर्ष बाद भी पति–पत्नी के बीच एक ताजगी भरा दाम्पत्य भाव है। क्योंकि नरेशचन्द्र को अपनी पत्नी के प्रति पूर्ण विशवास है और मोहिनी भी उनके सामने सदा एक खिले हुए फूल –सी बनी रहती है इतना ही नहीं इन दोनों के बीच रास्पर सेवा भाव भी है। पढ़ी लिखी मोहिनी '' खूद ही काम करती है। नौकर को अपने और पति के बीच कम ही आने देती है। शुरू में यह पति को पसन्द नहीं आया, पर मोहिनी का यह स्वभाव – सा था। '' परिणाम स्वरूप बैरिस्टर नरेशचन्द्र भी थके हारे घर आते हैं तो एक प्रेममयी पत्नी के कारण वे अपनी सारी थकान भूल जाते हैं –'' जैसे वह घर आकर अपना सब कुछ स्वत्व खो रहते हैं और तृप्त अनुभव करते हैं।'' भुवन मोहिनी और नरेशचन्द्र के सफल दाम्पत्य प्रेम का कारण परस्पर सम्मान का भाव और विश्वास ही है। नरेशचन्द्र ने कभी भी मोहिनी के विवाह के पूर्व के जीवन को जानने की कोशिश नहीं की थी और मोहिनी भी अपने पति की इच्छा के अनुरूप ही व्यवहार करती है। इसलिए दोनों के बीच एक दूसरे के प्रति सम्मान एवं विश्वास बना रहता है। इसलिए जब मोहिनी का पूर्व प्रेमी जितने क्रान्तिकारी गतिविधियों के कारण गिरफ्तार तब मोहिनी के पति बैरिस्टर नरेशचन्द्र सबकुछ जानने के बावजूद जितेन का केस लड़ने को तैयार हो जाते है और कहते हैं –'' सब एक – दूसरे की ही वजह से हुआ

करता है। वैसी वजहें न हों तो दुनिया वीरान हो रहे, मोहिनी..... तुम समझती हो, बहुत काम करना है ? अरे भई, हमारी बैरिस्टरी की तो शगल है महज। तुम्हारे इस मुकदमे से चलो,हाथ में कुछ काम ही हो जाएगा। और सुनो, मामूली मुकदमा नहीं है। कल से ही देखना, अखबारों में धूम मची दिखेगी। इसकी बदौलत उम्मीद है, हमारे नाम की भी धुम हो जाएगी।'' उस प्रकार पति – पत्नी के अटूट परस्पर के विश्वास के कारण ही उनका दाम्पत्य प्रेम बना रहता है, जिसे मोहिनी का पूर्व प्रेमी जीतने भी तोड़ नहीं पाता। डॉ. रामरतन भटनागर ने भी इसी बात को लक्षित करते हुए लिखा है –'' मोहिनी का अपरिसीम सेवा – भाव और पति प्रेम और नरेशचन्द्र की पत्नी के प्रति अपार आस्था ऐसे तत्व हैं, जो जितेन को विफल कर देते है।'' जैनेन्द्र ने 'मोहिनी–नरेशचन्द्र के दाम्पत्य प्रेम के द्वारा दाम्पत्य प्रेम का उदात्त स्वरूप दिखाया है, परंतु 'त्यागपत्र', 'कल्याणी', 'सुखदा' आदि उपन्यासों मे दाम्पत्य प्रेम की करूणता व्यक्त की है। जहाँ पत्नी अपना सर्वस्व खोकर भी पति का प्रेम प्राप्त करने में असफल दिखाई देती है।

'त्यागपत्र' की मृणाल दाम्पत्य जीवन में सच्चाई को महत्व देकर पति के सामने अपने पूर्व की बात व्यक्त कर देती है, परंतु उसका पति इसे स्वीकार नहीं कर सकता और घृणा एवं नफरत के कारण मृणाल को घर से निकालकर एक कोठरी में ले जाकर छोड़ देता है। परिणामतः उनका दाम्पत्य प्रेम टूट जाता है।

'कल्याणी' उपन्यास में भी स्वार्थी, धनलोलुप एवं भावनाहीन पति के कारण कल्याणी और डॉ. असरानी के बीच दाम्पत्य प्रेम पनप नहीं पाता। 'सुखदा' उपन्यास में भी सुखदा और कान्त का दाम्पत्य प्रेम महत्वकांक्षा की बलिवेदी पर स्वाहा हो जाता है। 'अनन्तर' के आदित्य और चारू के दाम्पत्य जीवन में भौतिक सुख सुविधा होते हुए भी चारू के अविश्वास एवं आदित्य की महत्वाकांक्षा के कारण दोनों के बीच दाम्पत्य प्रेम की सरिता कुछ समय तक बह नहीं पाती परंतु जब चारू अपने में परिवर्तन लाती है तो उपके दाम्पत्य जीवन में प्रेम की बहार फिर से आ जाती है। इस प्रकार जैनेन्द्र के उपन्यासों में दाम्पत्य प्रेम दोनों स्वरूप प्राप्य है।

(3) प्रेम का उदात्त रूप :–

प्रेम जहाँ जैविक धरातल छोड़कर उन्नत होकर अध्यात्म की भावभूमि पर प्रस्थापित होता है तो उसे प्रेम का उदात्त रूप या अलौकि प्रेम की संज्ञा दी जाती है। वास्व में प्रेम की उद्भावना भौतिक धरातल पर होती है परंतु उसका उन्नयन या उन्मेष आध्यात्म की भूमि पर होता है। इसलिए नर और नारी का प्रारंभिक प्रेम सौन्दर्य और भोग परक होता है, परंतु जब उसे चिंतन का स्पर्श मिलता है, तब उसमें

कामन के बदले भक्ति का भाव बलवत्तर बन जाता है जो व्यक्ति को प्रेमी से परिव्राजक या स्नेही से सन्यासी बना देता है। जैनेन्द्र भी इसी बात को व्यक्त करते हुए कहते हैं –'' जाने – अनजाने सब में श्रद्धा किंचित रहती है और हर पुरूष के जीवन में कोई स्त्री अवश्य ऐसी होती है, जिसके प्रति उसमें कामना से अधिक भक्ति है। उसके पैर तो छू सकता है, भोग की कल्पना भी नहीं कर सकता।'' अतः स्पष्ट है कि उदात्त प्रेम ऐन्द्रिक धरातल का त्याग कर अतीन्द्रिय धरातल का स्पर्श कर निरूद्देशीय आनंद का ही प्रबल समर्थक बन जाता है, जहाँ स्वार्थ नहीं भोग नहीं, केवल श्रद्धा एवं भक्ति ही रहती है। जैनेन्द्र ने अपने उपन्यासों में अपने विशिष्ट चिंतन के द्वारा स्वरूप को प्रस्तुत करते हुए उसे अध्यात्म की बुलन्दी पर पहुँचा कर उसके विश्वव्यापी रूप की भी पहचान करायी है।

'परख' उपन्यास में बिहारी और कट्टो के प्रेम को आध्यात्मिक भाव भूमि पर स्थित दिखाकर प्रेम के उदात्त रूप को व्यक्त किया है। बिहारी सत्यधन और कट्टो के भावनात्मक संबंध से परिचित था । वह स्वयं चाहता था कि सत्यधन कट्टो के साथ भावात्मक संबंध से परिचित था। वह स्वयं चाहता था कि सत्यधन कट्टो के साथ शादी करे, परंतु सत्यधन की धन लालसा और कट्टो की निःस्वार्थता बिहारी को दिल में कट्टो के प्रति एक उदात्त प्रेम क ज्योति प्रज्जवलित कर देती है। अतः बिहारी और कट्टो के मिलन के समय उसमे भोग लालसा उत्पन्न नहीं होती बल्कि एक दिव्य अनुभूति वह महसूस करता है। जैनेन्द्र ने इसी दिव्य प्रेम अनुभूति को शब्दों मे साकार करते हुए लिखा है –'' इसी क्षण भीतर कुछ उठा और बिहारी के शरीर और आत्मा को एक रंग में रंग गया। परमात्मा ने हम दोनों को साथ ला दिया है, अब दानों धाराएँ एक होकर बह सकती है। बह सकती है! हाँ, क्यों नहीं ऐसा कि उसका कुछ और न हो। बस अपनी सयुक्त – जीवनधारा पर किनारे –किनारे तीर्थ स्थापित करें और यह पुण्य की तरह लोक में बहती निलकती चली जाए। कल्याणी सरसाती हुई, धरती को हरियाती हुई, लोगों को नहलाती हुई, लहराती हुई अनन्त सागर में विलीन हो जाए।'' कट्टो भी ऐसी ही अनुभूति महसूस करती है –'' दोनों का मन एक है, नियति एक है। मालूम होता है, दोनों आपस के समझौते से इतनी दूर जा पड़ी है कि दोनों एक हीं उद्देश्य को दो जगह पूरा करें। दूर है, फिर भी पास हैं। अलग है, फिर भी एक है।'' इसलिए उपन्यास के अंत में दोनों एक प्रतिज्ञा में बँधते हैं। हम एक होंगे, एक प्राण दो तन। कोई हमें जुदा नहीं कर सकेगा।''

'सुनीता' उपन्यास में भी जैनेन्द्र ने सुनीता एवं श्रीकांत के प्रेम के द्वारा प्रेम का उदात्त, लोकोत्तर रूप व्यक्त किया है। अलौकिक प्रेम प्राप्त करना किसी सामान्य मानव का कार्य नहीं है। उसकी प्राप्ति के लिए बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है और अलौकिक जगत का विरोध भी सहना पड़ता

है। सुनीता भी इसको स्वीकार करती है –'' इससे मैं सहमत हूँ कि अलौकिक का बहिष्कार ही करे, पर अलौकिक इससे अस्त न हो जायेगा। मीरा दस – बीस नहीं हुई है, इससे अलौकिक को निश्चिन्त रहना चाहिए कि अलौकिक की लौकिक पर हावी होने की योजना नहीं है। मै समझती हूँ लौकिक के दिशा–दर्शन के हेतु से अलौकिक यदा–कदा घटित होता हे।'' अतः सुनीता को मीरा के रूप में देखते है। इसलिए वे मानते हैं – कृष्ण क होने के बाद अन्त में क्या सचमुच राणा ने नहीं पाया कि मीरा इन्हें गम्भीरता रूप में प्राप्त हो गयी है, कि अब उनके बीच किसी प्रकार का विच्छेद सम्भव ही नहीं है? मैं मानता हुँ कि उस सब के बस अन्त में पति–पत्नि इतने घनिष्ठ सम्भव हो सके।'' जैनेन्द्र ने अपनी इसी विचारधारा के अनुरूप ही उपन्यास के अंत में श्री कांत को सुनीता का पूर्ण पत्नीत्व प्राप्त होता दिखाया है। क्योंकि पति–पत्नी दोनों ने प्रेम की आलौकिक भावना पूर्ण रूप महसूस कर ली थी अतः हरितप्रसन्न रूपी कोई भी दीवार उनके बीच किसी भी प्रकार का विच्छेद नहीं कर सकती।

'त्यागपत्र' उपन्यास में भी उदात्त रूप को मृणाली की मानव सेवा के द्वारा दिखाया है। मृणाल जिस मानव समाज के द्वारा प्रताड़ित होती है, उसी मानव समाज के प्रति सद्भाव सेवा को ही ईश्वर सेवा समझती है। इसलिए वह पतित लोगों के बीच रहकर उनकी सेवा करना चाहती है। वह कहती है –'' जिन लोगों के बीच हूँ, वे समाज की जूठन हैं और कौन जानता है कि वे जूठन होने योग्य भी नहीं है। लेकिन आखिर तो इन्सान हैं और यह बात जब कि उनके बीच आ पड़ी है, मै साफ देखती हूँ। मै किसी भी और बात पर अब जिन्दा नहीं रहना चाहती हूँ।'' त्याग और निः स्वार्थता से भरा मृणाल का प्रेम प्रेम की उदात्तता का ही अनुभव कराता है।

कल्याणी भी उदात्त प्रेम की वाहिनी बनकर पति के अपमान, तिरस्कार पीड़ा आदि को सहन करती हुई मानव मात्र के कल्याण की कामना करती है इसलिए 'भारतीय तपोवन' की स्थापना भी करना चाहती है। त्यागपत्र देने से रोकती है, बल्कि उसके पूरे परिवार को हराभरा बनाने में भी निःस्वार्थ वृत्ति से सहायता करती है। इस प्रकार जैनेन्द्र के उपन्यासों में प्रेम का उदात्त रूप व्यक्त हुआ है, जिसमें अहं एवं स्वार्थ से मुक्त होकर केवल प्रेम की खातिर प्रेमी पात्र क्रियान्वित दिखाई देते हैं। जैनेन्द्र की इस विशेषता को देखकर राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह ने जैनेन्द्र को 'जीवन के विशिष्ट कलाकार' मानते हुए कहा है –'' इनकी प्रतिभा मनः जगत् तक ही सीमित नहीं, वरन् मानव के आत्म जगत् तक पहुँचकर उसके आध्यात्मिक तत्वों की रसात्मक अन्तः चेतना की पूरी दार्शनिक विवेचना प्रस्तुत करती है।'' अतः जैनेन्द्र के उपन्यासों में व्यक्त उदात्त प्रेम एक विशेष महत्व रखता है।

(4) राष्ट्रीय प्रेम :–

राष्ट्रीय 'शब्द' का विशेषण है और राष्ट्र अंग्रेजी शब्द 'नेशन' के पर्याय रूप में हिन्दी में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार राष्ट्रीय शब्द को 'नशनलिस्टिक' के समीप रखा जा सकता है। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने राष्ट्रीयता कोई भौगोलिक परिवृत नहीं है। वह एक गतिशील प्रवाह है, जो उस भौगोलिक परिवृत्ति को अर्थवान बनाता है। वह एक चेतन समूह का कमाया हुआ रस है, जड़ तत्वों को एक सार्थक व्यक्तित्व देता है। साहित्यकार राष्ट्रीयता को इसी रूप में स्वीकार करता है।'' अतः स्पष्ट है कि राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना या प्रेम है जिससे परिचालित होकर व्यक्ति अपने राष्ट्र के विकास एवं उसकी एकता और अखण्डित बनाये रखने के लिए कार्य करता है।

जैनेन्द्र उस संक्रांति काल में पनपे हैं जब महात्मा गाँधी के नेत्रृत्व में स्वाधीनता आन्दोलन चरम सीमा पर था। समय के प्रवाह के अनुकूल जैनेन्द्र भी राष्ट्रीय भावनाओं में रंग गये थे और कई बार जेल भी गये थे। स्वाधीनता आन्दोलन के चश्मदीद गवाह जैनेन्द्र ने आजाद भारत की राजनीति और राजनेताओं की स्वार्थ लोलुप्ता भी देखी थी। परिणामतः मनोवैज्ञानिक कथाकार जैनेन्द्र व्यक्ति के मन को ताँकते–झाँकते राष्ट्रीय प्रेम की अति सँकरी गली में भी दृष्टिपात कर गये, फलस्वरूप 'जयवर्धन' जैसे उपन्यास में एक राजनेता के मनोविश्लेषण के माध्यम से राष्ट्रीय प्रेम को भी हमारे सामने प्रस्तुत कर दिया।

जैनेन्द्र ने 'जयवर्धन' उपन्यास के एक प्रमुख पात्र आचार्य जी के माध्यम से राष्ट्र को व्यक्त किया है। राष्ट्रप्रेम के कारण वे भारत की वर्तमान स्थिति से चिंतित होकर कहते हैं –'' भारत का असल चैतन्य मूर्च्छा में है। वह दब सा गया है, उसे जगााना है, आगे फिर उसके अनुसार हमें करना है। जागृति के चिन्ह नहीं है, प्रयत्न भी नहीं है। लेकिन यह बात हम लोगों पर आती है जो वैसी श्रद्धा रखते हैं। तत्पर हमें होना है। सबको वह राज्य मिला है, जिसके वे योग्य होते हैं। राज में संस्कार लाने के लिए काम हमें प्रजा में करना है।''

जयवर्धन भी राष्ट्र प्रेम की खातिर अपने पद से त्यागपत्र देना चाहता है। जब इला और जयवर्धन के सम्बन्धों को लेकर विभिन्न राजनीतिक दल विवाद करने लगे तब जयवर्धन अपने राष्ट्रप्रेम का परिचय देते हुए कहता है –'' राज्य बड़ी चीज है और करोड़ो का सुख–दुख उसमें गर्भित है। लेकिन अब यही करना चाहता हूँ कि उन करोड़ो को कहूँ कि अपना सुख–दुख मुक्त बनाओं, राज के अधीन उसे न होने दो। शासन कभी अपनी ओर से अपने को समाप्त करने वाला नहीं है। समाज को ही नीचे से अपने को शासन–मुक्त करते हुए उठना होगा। आपका आर्शीवाद हो तो मैं इसी काम के

लिए छुट्टी पाना चाहता हूँ।'' परंतु सर्वदलीय सभा के फैसले के अनुसार जय इला से विवाह करते हैं लेकिन राज्य का भार आचार्य को सौंप कर चले जाते हैं।

इस प्रकार जैनेन्द्र ने 'जयवर्धन' के द्वारा राष्ट्र प्रेंम को व्यक्त करते हूए संकेत दिया है कि राज्य महान होता है। राष्ट्र या राज्य के लिए व्यक्ति को त्याग देने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए।

संदर्भ–संकेत

1 हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास–उमेश शास्त्री–पृ.12

2 नया साहित्य नये प्रश्न –डॉ. नंद दुलारे बाजपेयी –पृ.184

3 सुनीता–जैनेन्द्र कुमार (प्रस्तावना)

4 सुभाषित भंडागार–भर्तुहरी

5 घर–बाहर–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–7,पृ.197

6 परख–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.52

7 परख–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.78

8 परख–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.94

9 सुनीता–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.193

10 सुनीता–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.193

11 त्यागपत्र–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.386

12 त्यागपत्र–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.346–347

13 सुखदा–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.527

14 दशार्क–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–3,पृ.348

15 घर–बाहर –जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.198

16 जैनेन्द्र सृजन और सन्दर्भ – सं.डॉ. सावित्री मिश्र–पृ.122

17 कल्याणी–जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–1,पृ.423

18 अनामस्वामी –जैनेन्द्रकुमार, जैनेन्द्र रचनावली खण्ड–3,पृ.284